आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज की पूजन

(रचयिता-आचार्यश्री विमर्शसागर जी महाराज)

गुरु विरागसागर के पद में, अर्पित भावों का चंदन।
श्रमण संघ के नायक गुरुवर, महावीर के लघुनंदन॥
आओ गुरुवर हृदय विराजो, दूर करो मम आक्रंदन।
भवसागर से पार उतारो, नाथ! चरण में शत् वन्दन॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्यविरागसागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्यविरागसागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्यविरागसागरमुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

क्षीर नीर भरकर मैं लाया, स्वर्णपात्र में हे गुरुवर।
द्रव्य-भाव-नोकर्म अशुचिता, धोने आया हे प्रभुवर॥
हूँ अखण्ड अविनाशी चेतन, निज स्वभाव से पूर्ण प्रभो।
निश्चय श्रद्धा से मिटते हैं, जन्म-जरा-मृतु रोग विभो॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय जन्मजरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-द्वेष की ज्वाला में, भव-भव से जलता आया हूँ।
हे गुरुवर! पर को अपना कह, अब तक रुलता आया हूँ॥
शीतल चन्दन लाया गुरुवर, भव आताप मिटाने को।
शुद्ध-बुद्ध ज्ञायक स्वरूप, निज से निज में प्रगटाने को॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्यायों के मद में आकर, नाथ! अनन्तों पद पाये।
शान्त हुई न तृष्णा गुरुवर, नहीं निरापद हो पाये॥

अक्षत धवल अखण्ड चढ़ाऊँ, अक्षय पद अब मिल जाये।
शुद्ध आत्मा के अनुभव से, नाथ! विपद अब टल जाये॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्गति में भटका अब तक, पंच परावर्तन करके।
काम वासना मिटा न पाया, हाय-हाय नर तन धरके॥
निज स्वभाव में रमकर गुरुवर, ब्रह्मचर्य रसपान करुँ।
पुष्प सुगंधित चरण चढ़ाऊँ, कामभाव अवसान करुँ॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के पुद्गल सारे, क्षुधा अग्नि के ग्रास बने।
शांत हुई न क्षुधा वेदना, भव-भव से हम दास बने॥
गुरु चरणों नैवेद्य चढ़ाऊँ, क्षुधारोग का नाश करुँ।
अरस, अरूप, अगंध, अस्पर्शी, शुद्धातम में वास करुँ॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहभाव से हे गुरुवर, चौदह राजू चलकर आया।
विषयों की वैसाखी से, चौरासी का चक्कर खाया॥
महा मोहतम मिट जाये, प्रगटाऊँ ज्ञानज्योति चिन्मय।
कंचन दीप चढ़ाऊँ गुरुवर, निज स्वभाव में हो तन्मय॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय मोहन्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु कर्मों से हे गुरुवर!, दुःख पाया कैसे बतलाऊँ।
भेदज्ञान प्रगटा अब कैसे, पुण्य-पाप में इठलाऊँ॥
सिद्ध प्रभु सम गुण प्रगटाने, अष्ट कर्म का नाश करूँ।
शुद्ध भाव सी धूप चढ़ाऊँ, हर्षाऊँ, उल्लास धरूँ॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म ध्यान में लीन सदा, फिर शुक्ल ध्यान पुरुषार्थ करें।
नाथ! आप समवीर्य प्रगट हो, मुनि बन हम परमार्थ वरें॥
क्षपक श्रेणि चढ़ केवलज्ञानी, बन भव बीज समाप्त करें।
नाथ! चरण में फल अर्पित हम मोक्षमहाफल प्राप्त करें॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षायिकदर्शन-ज्ञान-वीर्य-सुख, अनुजीवी गुण प्रगटाऊँ।
अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु, अव्याबाध सहज पाऊँ॥
प्रतिजीवी गुण प्रगट जहाँ हों, शुद्ध सिद्ध पद मिल जाये।
नित्यानंद स्वभावी आतम फिर जग में न रुल पाये॥
यही भावना लेकर आया, श्री चरणों में हे स्वामिन्!।
दो विराग गुरु निज विरागता, पाऊँ निज चैतन्य सदन॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चरण में, अर्पित करने लाया हूँ।
ज्ञायक-ज्ञेय दोष हे गुरुवर, सहज मेंटने आया हूँ॥

ॐ ह्रूँ श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

जिनवाणी सुत हे गुरु! आप गुणों की खान।
सिद्ध प्रभु जैसा मिले, मुक्ति का वरदान॥

हे ऋषिवर! यतिवर! हे गुरुवर! हे मुनिवर! रत्नत्रय धारी।
छत्तीस मूलगुण पाल रहे व्रत समिति गुप्तियों के धारी॥

निज में अखंड ज्ञायक प्रभु की सत्ता को जब स्वीकार किया।
जिनलिंग स्वयं ही प्रगट हुआ जन-जन ने जय-जयकार किया॥

सम्यक्त्व शुद्ध अनुभव विशुद्ध, जब निज में निज को प्राप्त किया।
चैतन्य तेज तब प्रगट हुआ, दर्शन मोहान्ध समाप्त किया॥

सम्यक्त्व महानिधि की महिमा तिहुँ लोकों में गाई जाती।
अमरों की मनहर अमरपुरी इसके आगे शर्मा जाती॥
हे नाथ! ज्ञान की महिमा को, निज भेदज्ञान से जाना है।
मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ, अनुभव से आप बखाना है॥
हे ज्ञान-ध्यान तप लीन श्रमण, मेरे अन्तस में वास करो।
शुद्धात्म ज्ञान हो प्रगट मेरे, अज्ञान भाव का नाश करो॥
बाईस परीषह, द्वादश तप दस धर्म सहज ही पाल रहे।
शुद्धोपयोग में रमकर के शुभ-अशुभ सहज ही टाल रहे॥
व्यवहार और निश्चय स्वरूप, रत्नत्रय के आराधन में।
रहते हो गुरुवर आप निरत, निज पंचाचार के पालन में॥
शुद्धात्म तत्व के अनुभव की, नित मणियाँ बाँटा करते हो।
षट्द्रव्यों में चैतन्य द्रव्य-गुण-पर्यय छाँटा करते हो॥
पाने को नित्य निराकुल सुख, अनुभव पथ पर बढ़ते जाते।
आगम कहता है शिवपथ पर, ये कर्मों से लड़ते जाते॥
अध्यात्म और आगम सचमुच, साकार आपकी चर्या में।
हे महायोगि! हे महासन्त, अनुभव प्रगटा है किरिया में॥
मैं भी अनगार बनूँ गुरुवर, बस यही भावना भाता हूँ।
शुद्धात्म प्रकाशी महा अर्घ्य, गाकर जयमाल चढ़ाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री 108 आचार्य विरागसागर मुनीन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगल की शुभ भावना, स्वातम मंगल पाय।
मंगल भावों से गुरु, पुष्पांजली चढ़ाय॥

(परिषुष्पांजलिं क्षिपामि)